ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292RNI
REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 201-203**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-III, Issues-33, YEAR-July-Sept. 2024

पं0 जवाहर लाल नेहरू का अन्तर्राष्ट्रीयतावाद

डॉ0 अरुण कुमार तिवारी
प्रोफेसर– राजनीति विज्ञान विभाग, मुनीश्वर दत्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय, प्रतापगढ़ (उ0प्र0) भारत

Received-18.09.2024, Revised-25.09.2024, Accepted-30.09.2024 **E-mail : draktiwaripbh@gmail.com**

सारांशः** पं0 जवाहर लाल नेहरू एक राष्ट्रवादी चिन्तक एवं नेता होने के साथ–साथ एक अन्तर्राष्ट्रीयतावादी भी थे। वे राष्ट्रवाद के संकुचित दृष्टिकोण को न स्वीकार कर उसे व्यापक दृष्टिकोण देने के पक्ष में थे। उनका स्पष्ट मत था कि जब तक विश्व के देशों में शान्ति एवं सद्भव नहीं होगा तब तक सभी राष्ट्रों की सम्प्रभुता को खतरा बना रहेगा। सभी राष्ट्रों की सम्प्रभुता की रक्षा के साथ–साथ उसकी समृद्धि और विकास के लिए परस्पर सहयोग एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध आवश्यक है। इसीलिए उन्होंने पंचशील एवं गुटनिरपेक्षता को भारत की विदेश नीति का आधार बनाया। मानव कल्याण नेहरू जी के लिए सर्वोपरि है। ब्रिटिश शासनकाल में भारत की जो दुर्दशा हुई, उसके परिणाम स्वरूप वे प्रखर राष्ट्रवादी बने, किन्तु मानव कल्याण की व्यावहारिक आवश्यकताओं ने उन्हें अन्तर्राष्ट्रीयतवादी बना दिया। यही कारण था कि वे संयुक्त राष्ट्रसंघ के सिद्धान्तों के प्रबल पक्षधर एवं गुटबन्दी के विरोधी थे। उनका पूर्ण विश्वास था कि मानव कल्याण विश्व एकता एवं परस्पर मैत्री से ही संभव है। इस प्रकार पं0 नेहरू का अन्तर्राष्ट्रीयतावाद शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व के सिद्धान्त पर आधारित था। यह नीति तत्कालीन भारत के लिए प्रासंगिक और उपयोगी थी।

कुंजीभूत शब्द– अन्तर्राष्ट्रीयतावाद, राष्ट्रवादी चिन्तक, पंचशील एवं गुटनिरपेक्षता, साम्प्रदायिकता, पृथकतावादी शक्ति

प्रस्तुत शोधपत्र में यह समझने का प्रयास किया गया है कि भारत जैसे विशाल देश के लिए पं0 जवाहर लाल नेहरू ने जिस विदेश नीति एवं अन्तर्राष्ट्रीयतावाद का प्रतिपादन किया क्या वह तत्कालीन परिस्थितियों में भारत के लिए प्रासंगिक एवं उपयोगी था? भारत–चीन युद्ध (1962) के बाद पं0 नेहरू के विदेश नीति की आलोचना की गयी। चीन से पराजय को केन्द्र बिन्दु मानकर पूरी विदेश नीति की आलोचना करना उचित नहीं है। सम्पूर्ण भारतीय परिप्रेक्ष्य में विदेश नीति का अध्ययन करके ही उसका समुचित विश्लेषण करना उचित होगा। वास्तव में नेहरू जी ने विदेश नीति का निर्धारण भारत की घरेलू एवं अर्न्तराष्ट्रीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया था।

स्वतन्त्रता के बाद देश में व्याप्त साम्प्रदायिकता, प्रान्तवाद, भाषावाद एवं पृथकतावादी शक्तियों से मुक्ति के लिए आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने की आवश्यकता थी जिससे स्वतंत्र भारत को सुदृढ़ भारत भी बनाया जा सके। सामाजिक एवं आर्थिक जीवन–स्तर को आधुनिक बनाने के लिए भारत ने समाजवादी समाज की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत को साम्यवादी और पश्चिमी देशों से अपने अच्छे सम्बन्ध रखते हुए दोनों से आर्थिक सहायता प्राप्त करना था। किन्तु यह कार्य इतना आसान नहीं था, परन्तु नेहरू जी ने इसे लक्ष्य मानकर अपनी विदेशनीति को आगे बढ़ाया। "नहेरू ने आर्थिक विकास, धर्म निरपेक्षता तथा राजनीतिक लोकतंत्र के त्रिगुणात्मक कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए विदेश नीति को उसी क्रम में निर्धारित किया जिससे भारत की प्रगति में कोई बाधा न पड़े।"[1] 1950 के दशक में विश्व शीतयुद्ध से जल रहा था। इस दौरान दो ध्रुवीय विश्व में गुट निरपेक्षता को कोई महत्त्व देने के लिए तैयार नहीं था। 'नाटो' और 'वारसा पैक्ट' के कारण साम्यवादी और पश्चिमी देश दोनों ही गुट अपनी शक्ति में वृद्धि के प्रयत्न करते हुए निर्गुट देशों को अपनी तरफ करने का प्रयास कर रहे थे। ऐसे समय में पं. नहेरू ने भारत की विदेशनीति को गुट निरपेक्ष बनाये रखा। बांडुंग सम्मेलन में नहेरू की सफल विदेश नीति और नेतृत्व के कारण एशिया और अफ्रीका के देशों को नई प्रेरणा तथा शक्ति प्राप्त हुई।[2]

पं0 जवाहर लाल नहेरू अपनी विदेश नीति में कभी भी महाशक्तियों के सामने झुके नहीं और न ही भारत ने कमजोर राष्ट्रों को कभी भी धमकाने का प्रयास किया। उनका उद्देश्य सदैव राष्ट्रों के मध्य मैत्री की स्थापना करना था। नहेरू जी सदैव परमाणु हथियारों की होड़ का विरोध करते रहे। उन्होंने महाशक्तियों की शक्ति लोलुपता एवं नव उपनिवेशवादी नीतियों का कभी भी समर्थन नहीं किया। उन्होंने कहा कि यदि विश्व में शान्ति के प्रयासों तथा सह–अस्तित्व की भावना को न बनाये रखा गया तो सम्पूर्ण विश्व का विनाश सम्भव है। अपने अन्तर्राष्ट्रीय चिन्तन में वे सदैव दुनिया को युद्ध की विभीषिका से बचाने का प्रयास करते रहे।[3] नेहरू जी का कहना था कि भारत पृथकता की नीति अपनाकर विश्व राजनीति से अपने को पूरी तरह से अलग नहीं रख सकता। भू–राजनीति और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए भारत को अपनी भूमिका का निर्धारण करना होगा। भारत को सदैव अपनी राष्ट्रीय सम्प्रभुता एवं राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखकर कार्य करना होगा। उन्होंने कहा कि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की नीति का अनुसरण करते हुए सभी राष्ट्रों के साथ अच्छे पड़ोसियों जैसा सम्बन्ध बनाना होगा। इसके लिए हम सही को सही और गलत को गलत कहने से हिचकेंगे नही"।[4] नेहरू जी के अन्तर्राष्ट्रीयता के विचार में आदर्शवाद का पुट कुछ अधिक ही देखने को मिलता है जिसके कारण आलोचकों ने उनकी विदेश नीति को असफल कहा। किन्तु वास्तव में उनकी विदेश नीति केवल आदर्शात्मक ही नहीं थी वे एक यथार्थवादी भी थे। क्योंकि उन्होंने आदर्श के नाम पर राष्ट्रीय हितों और सम्प्रभुता को बलिदान नहीं किया।

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति स्थापना की ओर अपना कदम बढ़ाते हुए पं0 नहेरू ने 'पंचशील सिद्धान्त' को भारतीय विदेश नीति का आधार स्तम्भ बनाया। पंचशील की मान्यता नेहरू के प्रयासों का ही परिणाम थी। इसी सिद्धान्त पर उन्होंने भारत–चीन समझौता किया और तिब्बत के साथ भारत के व्यापार एवं आवागमन को सुरक्षित रखने का प्रयास किया। नेहरू

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-III, Issues-33, YEAR-July-Sept. 2024

जी का मत था कि यदि सम्पूर्ण विश्व पंचशील को मान्यता दे दे तो सभीं राष्ट्रों की सम्प्रभुता का सम्मान होगा तथा राष्ट्रों के वैमनस्य समाप्त हो जायेंगे। पंचशील का अर्थ यह नहीं था कि भारत अपनी मान्यताओं का त्याग करके तुष्टिकरण की नीति अपनाये तथा उपनिवेशवादी एवं साम्राज्यवादी ताकतों का विरोध न करे। पंचशील को मान्यता भारत की लोकतंत्र के प्रति निष्ठा का प्रतीक है।[5] पंचशील के माध्यम से नेहरू जी विश्व को युद्ध की विभीषिका से बचाकर मानवता के भविष्य को सुरक्षित रखना चाहते थे इसीलिए उन्होंने महाशक्तियों के द्वारा प्रचार साधनों का दुरुपयोग करके शीतयुद्ध को बढ़ाता देने की प्रवृत्ति का विरोध किया।

अपने अन्तर्राष्ट्रीयता के विचार में नेहरू ने पंचशील के साथ–साथ गुट निरपेक्षता को महत्वपूर्ण स्थान दिया। गुट निरपेक्षता भारत की विदेश नीति का साध्य नहीं अपितु साधन थी। गुट निरपेक्षता का मतलब राष्ट्रीय नीति और राष्ट्रीय क्रियाओं को त्यागना नहीं था अपितु किसी भी महाशक्ति के दबाव में सैन्य सन्धि से न बंधना था। पं0 नेहरू के अनुसार "असंलग्नता का अर्थ तटस्थता, निष्क्रियता अथवा दीवार के दोनों ओर पैर लटका कर बैठने की नीति से नहीं था। भारत की विश्व राजनीति के सक्रियता एवं गतिशीलता को देखते हुए उसे तटस्थतावाद का समर्थक नहीं कहा जा सकता था। गुटनिरपेक्षता की नीति का उद्देश्य विश्व के व्यापक हितों को दृष्टि में रखते हुए भारत के स्वयं के राष्ट्रीय हितों की पूर्ति करना था।"[6]

पं0 जवाहर लाल नेहरू ने भारत की विदेश नीति में नस्लभेद एवं रंगभेद की नीति का विरोध किया। गुलाम देशों के शान्तिपूर्ण स्वतन्त्रता आन्दोलनों का उन्होंने समर्थन किया। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण निपटारे के लिए बातचीत एवं समझौतों की नीति को आगे बढ़ाया। स्वेज संकट के समय नेहरूजी ने कहा था कि आधुनिक विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को राष्ट्रों के मध्य मल्ल युद्ध से नहीं निपटाया जा सकता है। व्यक्तियों की निन्दा करके भी कुछ प्राप्त नहीं किया जा सकता है। हमें गलत कार्य करने वालों को सद्भावना से जीतना चाहिए और साथ ही साथ उन सिद्धान्तों के प्रति सदैव निष्ठावान रहना चाहिए जो राष्ट्रीय दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।"[7] नेहरू ने साम्राज्यवादी एवं औपनिवेशिक शासन से दबे राष्ट्र के आत्मनिर्णय एवं स्वतन्त्रता के अधिकार को सर्वव्यापी बनाने का प्रयास किया। वे सदैव शान्ति एवं सहिष्णुता की नीति पर ही अन्तर्राष्ट्रीयता के विचारों को रखने के हिमायती थे। उनके अनुसार भारत द्वारा शान्ति की कामना इस कारण नहीं की जाती है कि भारत अपने आर्थिक विकास के लिए इसे चाहता है बल्कि जीवन, चिन्तन एवं क्रियाशीलता के लिए शान्ति अति आवश्यक है।

पं0 जवाहर लाल नेहरू अपनी विदेश नीति एवं अर्न्राष्ट्रीयता के चिन्तन में अफ्रीका और एशिया के देशों को विश्व राजनीति में सक्रिय योगदान करने का आहवान करते रहे। वे एशिया एवं अफ्रीका के कुछ राष्ट्रों की पूर्ण पृथकतावादी नीति के समर्थक नहीं थे। इसके अतिरिक्त पं0 नेहरू अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को मजबूत करने का प्रयास करते रहे। उन्होंने संयुक्त राष्ट्रसंघ को प्रभावी बनाने का पुरजोर प्रयास किया। उनके अनुसार युद्ध और अशान्ति के प्रश्नों को सुलझाने में संयुक्त राष्ट्रसंघ अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है। अपने अन्तर्राष्ट्रीयतावाद में पं0 नेहरू सदैव विश्व एकता की ओर बढ़ने का प्रयास करते रहे। प्रारम्भिक दौर में वे एक ऐसे विश्वसंघ की कामना करते रहे जिसमें भारत, चीन, बर्मा, श्रीलंका तथा अफगानिस्तान आदि देश सम्मिलित हों। पश्चिमी देशों के उपनिवेशवादी, साम्राज्यवादी एवं फासीवादी नीतियों के कारण उन्होंने सोवियत संघ सहित अन्य राष्ट्रों के सम्मिलित प्रयास से ही विश्व संघ की कल्पना की। वे एक ऐसा विश्व संघ चाहते थे जो स्वतन्त्रता, समानता एवं लोकतंत्र पर आधारित हो और जिसमें प्रत्येक राष्ट्र की आन्तरिक सम्प्रभुता का पूरा सम्मान हो।[8]

विश्व एकता एवं विश्व राज्य की कल्पना में नेहरू जी का पूर्ण विश्वास था। वे मानते थे कि राष्ट्रों में व्याप्त परस्पर भय तथा घृणा का अन्त करके स्वतन्त्रता तथा पारस्परिक सहयोग पर आधारित विश्व एकता सम्भव है। उनके अनुसार यदि विश्व राज्य की स्थापना नहीं होती हो विश्व का भविष्य अंधकारमय हो जायेगा। पं0 नेहरू के अनुसार भारत का राष्ट्रवाद सदैव विश्व एकता, अन्तर्राष्ट्रीयता एवं सहयोग पर आधारित रहा है। अतः भारत विश्व राज्य की स्थापना में अपना पूर्ण योगदान कर सकता है। अपने विश्व एकता के विचार में नेहरू जी जिस शान्ति की बात करते थे उसका यह मतलब नही था कि वे राष्ट्र के साथ शान्ति के नाम पर कोई भी समझौता कर सकते थे। उनका कहना था कि अन्याय का प्रतिकार करना आवश्यक है, किन्तु अन्यायी राष्ट्र से युद्ध करते समय भी बातचीत एवं शान्ति का हाथ उसकी तरफ बढ़ाकर रखना चाहिए। नेहरूजी के विश्व एकता एवं विश्व राज्य की कल्पना में यथार्थवाद कम एवं आदर्श का पुट ज्यादा है।

नेहरू के सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीयता के विचारों का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने लैटिन अमेरिका को छोड़कर सम्पूर्ण विश्व से भारत के सम्बन्धों को सुदृढ़ किया। उन्होंने गुट निरपेक्षता के बल पर ही विश्व के दोनों गुटों से भारत के सम्बन्ध अच्छे रखे। अरब राष्ट्रों से भी उन्होंने सदैव प्रगाढ़ सम्बन्ध बनाये। अनेक अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। हिन्द चीन की समस्या, कोरिया युद्ध, स्वेज संकट एवं निरस्त्रीकरण की समस्या के निवारण में भारत की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण थी। नेहरूजी की चीन के प्रति जो नीति थी, निश्चय ही वह दोषपूर्ण थी और इसके खिलाफ देश में व्यापक प्रतिक्रिया भी हुई। इसके बावजूद नेहरू द्वारा स्थापित शान्ति एवं मैत्री की नीति का भारत ने परित्याग नहीं किया। उन्हीं की नीतियों पर चल कर ही भारत ने अपने प्रतिरक्षा तंत्र को और अधिक मजबूत किया और भारत विरोधी ताकतों को सदैव मुँहतोड़ जवाब दिया। नेहरूजी की विदेश नीति का यह उज्ज्वल पक्ष ही था कि भारत गुट निरपेक्षता के बल पर ही नवोदित देशों का नेतृत्व करता रहा और दोनों महाशक्तियाँ भारत के विचार

और निर्णय को महत्व देने के लिए बाध्य हुईं। उनकी नीतियों का ही परिणाम था कि भारत अपनी आर्थिक प्रगति में विश्व के समृद्ध राष्ट्रों से सहयोग प्राप्त करने में भी सफल रहा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मूर्ति वी0एस0एन0 'Nehru's Foreign Policy', दी वीकन इनफार्मेशन एण्ड पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1953, पृष्ठ–31
2. क्रोकर डब्ल्यू0आर0 'Nehru', जार्ज एलन एण्ड अनविन, लन्दन, 1966, पृष्ठ–109
3. नेहरू पं0 जवाहर लाल 'India's Foreign Policy', पब्लिकेशन्स डिवीजन, नई दिल्ली, 1961, पृष्ठ–83
4. नेहरू पं0 जवाहर लाल वही, पृष्ठ–84
5. मोरेस फ्रैंक 'Nehru-Sunlight and Shadow', जैको पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1964, पृष्ठ–172
6. मेन्डे टाइबर 'Conversation with Nehru',, सेकर एण्ड बारबर्ग, लन्दन, 1956, पृष्ठ–44
7. नेहरू पं0 जवाहर लाल 'दी' हिन्दू', 28 दिसम्बर, 1956
8. नार्मन डेरोबी 'Nehru-The First Sixty years', एशिया प्रकाशन, बम्बई, 1965, पृष्ठ–641

*****